International Journal of Applied Research 2021; 7(1): 476-478

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(1): 476-478
www.allresearchjournal.com
Received: 18-11-2020
Accepted: 29-12-2020

अर्चना राय
छात्रा, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग, ल०ना०मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
अर्चना राय
छात्रा, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग, ल०ना०मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

बाल्यावस्था में सामाजिक व्यवहारों के विकास में पारिवारिक कारकों की भूमिका का प्रभाव एक अध्ययन

अर्चना राय

सारांश
बाल्यावस्था में व्यक्तित्व विकास, सामाजिक एवं सांवेगीक विकास में पारिवारिक वातावरण एवं शिक्षा का अहम योगदान है। अनेक मुख्य कारकों में से पारिवारिक वातावरण की सशक्त एवं सुदृढ़ समाज व राष्ट्र निर्माण में सर्वोपरि महत्व करता है। बाल्यावस्था सामाजिक विकास की महत्वपूर्ण अवस्था है। इस अवस्था को दो भागों में विभाजित किया गया है- पूर्व बाल्यावस्था एवं उत्तर बाल्यावस्था शुरूआत 2 से 6 वर्ष की आयु पूर्व बाल्यावस्था कहलाती है जिसमें बच्चे की आत्मनिर्भरता में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। यह अवधि पाठशाला में प्रवेश की होती है। इसलिए इसे 'स्कूल पूर्व आयु' भी कहा जाता है और 'टोली पूर्व आयु' भी कहा जाता है। इस अवधि में बालक सामाजिक व्यवहारों के आधारभूत तत्वों को सीखना आरंभ करता है। उत्तर बाल्यावस्था का आरंभ 6 वर्ष की आयु से होता है तथा वयःसंधि के प्रारंभ अर्थात् 12 वर्ष तक चलता रहता है। बालक स्कूल में प्रवेश पा चूका रहता है। इस अवस्था को 'टोली की अवस्था' भी कहा जाता है। इसे 'प्रारम्भिक स्कूल अवस्था' भी कहा जाता ही। अतः जीवन के अनेक पक्षों के विकास की दृष्टि से यह आयु अत्यंत महत्व रखती है। प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत बाल्यावस्था में होने वाले सामाजिक, सांवेगिक एवं व्यक्तित्व विकास संरूपों का क्रमशः वर्णन किया गया है।

कूटशब्द : बाल्यावस्था, सामाजिक व्यवहार, शिक्षा

प्रस्तावना
बाल्यावस्था में होने वाले सामाजिक विकास का वर्णन इस आलेख में किया गया है। इसके अतर्गत पूर्व तथा उत्तर बाल्यावस्था में सामाजिक विकास का क्या संरूप होता है? इस अवधि में कौन-कौन से सामाजिक व्यवहार परिलक्षित होते हैं? तथा सामाजिक व्यवहारों के विकास में पारिवारिक कारकों की क्या भूमिका होती है एवं अन्य परिवेशीय कारकों की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण होती है? इन प्रश्नों की समीक्षा इस आलेख के अंतर्गत किया गया है। बालक में होने वाले संवेगात्मक विकास का वर्णन एवं इसके अंतर्गत यह जानने का प्रयास किया गया है कि पूर्व तथा उत्तर बाल्यावस्था में सांवेगिक विकास का संरूप क्या होता है? सामान्यतः कौन-कौन से संवेग अभिव्यक्त होते हैं? तथा सांवेगिक विकास के निर्धारण में किन कारकों की भूमिका महत्वपूर्ण है? बाल्यावस्था में व्यक्तित्व विकास का विवेचन एवं इसके अंतर्गत विकास से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों जैसे व्यक्तित्व का संरूप क्या है? स्व तथा शीलगुणों का विकास किस प्रकार होता है? व्यक्तित्व की कौन-कौन सी विशेषतायें मुख्य रूप से बाल्यावस्था में परिलक्षित होती है?

व्यक्तित्व के विकास में किन कारकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है? की समीक्षा की गयी है। अंत में, व्यक्तित्व विकास के स्वरुप की ब्याख्या प्रमुख सैद्धान्तिक उपागमों के आधार पर की गई है।

सामाजिक विकास एवं पारिवारिक कारकों में संबंध

सामाजिक व्यवहारों का विकास यद्यपि शैशवावस्था से ही आरंभ हो जाता है परन्तु बाल्यावस्था में, सामाजिक विकास के संरूपों में गुणात्मक तथा मात्रात्मक परिवर्तन तीव्रतर गति से परिलक्षित होने लगते हैं। पूर्व बाल्यावस्था तथा उत्तर बाल्यावस्था में होने वाले सामाजिक विकास के संरूपों में पारिवारिक माहौल की भूमिका एवं विकास को प्रभावित करने में पारिवारिक सदस्यों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है।

पूर्व बाल्यावस्था में सामाजिक विकास

बच्चों के सामाजिक की बुनियादी परिवार से पड़ती है। सामाजिक की इस प्रक्रिया में माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्य, रिश्तेदार प्रमुख अभिकर्ता के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। तत्पश्चात बाल्यावस्था में आस-पड़ोस, मित्रमंडली एवं विद्यालय की भूमिका भी सामाजिक विकास प्रक्रम में महत्वपूर्ण हो जाती है। जैसे-जैसे बालक परिवार के दायरे से निकलकर बाहरी लोगों से सम्पर्क बनाता है वैसे-वैसे उसकी सामाजिक दुनिया विस्तृत होती जाती है। माता-पिता पर बच्चे की निर्भरता कम होने लगती है तथा उसके स्थान पर परिवार के बाहरी व्यक्तियों से सम्बन्ध बनते जाते हैं। हिथर्स (1957) का मानना है कि घर के बाहर की आरंभिक सामाजिक अनुभव संवेगों की दृष्टि से बालक के लिए प्रायः समस्या उत्पन्न करने वाले होते है, विशेषतः तब जब वह अपने से बड़े बालकों के सम्पर्क में आता है। बाहरी लोगों से समायोजन करने में उसकी सफलता बहुत कुछ इस बात से प्रभावित होती है कि घर के अन्दर उसे किस प्रकार के अनुभव प्राप्त हुए हैं। यथा-जनतान्त्रिक ढंग से पले-बढ़े बच्चों का समायोजन घर के बाहर सामाजिक समायोजन तथा पालन-पोषण की शैली से भी निर्धारित होता है। ये बच्चे सत्तावादी, घरेलू परिवेश वाले बालकों की तुलना में अधिक समायोजनशील होते हैं। इसी प्रकार परिवार में बालक की संस्थिति (यथा-बच्चा अपने माता-पिता की एकलौती संतान है या उसके सहोदर है, इत्यादि) भी उसके घर के बाहर के सामाजिक समायोजन को प्रभावित करती है (बोसार्ड, 1953)।

बच्चे का जन्मक्रम, माता-पिता द्वारा पालन पोषण की शैली, बच्चे के प्रति उनकी अभिवृतियाँ, परिवार वातावरण सभी कुछ बच्चे के प्रारंभिक अनुभवों को प्रभावित करते हैं।

यदि ये अनुभव धनात्मक हैं तो बाहरी लोगों से उसका समायोजन ठीक होगा। इसके विपरीत आरंभिक नकारात्मक अनुभव, बाहरी परिवेश के सारे बच्चों के समायोजन की क्षमता को घटाते हैं। प्रारंभिक बाल्यावस्था सामाजिक विकास की 'टोली पूर्व' अवस्था यदि किसी कारणवश पूर्व बाल्यावस्था में बच्चे को अन्य बालकों के सम्पर्क में रहने का अवसर नहीं मिलता तो वह उन अनुभवों से बंचित रह जाता है जो तात्कालिक एवं भविष्य में सामाजिक समायोजन के लिए आवश्यक होते हैं। छोटे बालकों के सामाजिक विकास में सामाजिक व्यवहारों की संख्या के अतिरिक्त उनके प्रकारों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। यदि उसे दूसरों के सम्पर्क से आनंद आता है, तो चाहे ये सम्पर्क कभी-कभी क्यों न हों, बावजूद इसके अग्रिम सामाजिक सम्पर्कों के प्रति उनमें धनात्मक अभिवृति विकसित करते हैं।

शिशु जहाँ वयस्कों के साथ अधिक संतुष्टि रहते हैं, वहीँ उसके लिए छोटे बच्चों का सम्पर्क सन्तोषप्रद नहीं होता, परन्तु तीन वर्ष की आयु के बालक अन्य बालकों अन्य बालकों की ओर देखने में रूचि लेते हैं और यह उनसे सम्पर्क बनाने की प्रथम कोशिश होती है। इस अवस्था में बालक समानांतर खेल खेलता है जिसको दो बालक साथ होते हुए भी स्वतंत्र रूप से स्वांतः सुखाय, खेलते हैं। इसके बाद 'सहचारी खेल' का चरण आता है जिसमें बालक अन्य बालकों के साथ खेलता है तथा एक जैसी क्रियाएँ करता है। अंततः 'सहयोगी खेल' का चरण आता है जिसमें बालक समूह का एक अंग बन जाता है। मार्शल (1961) के अनुसार 3-4 वर्ष की अवस्था में बालक में समूह के प्रति लगाव विकसित होता है जो आयु में वृद्धि के साथ-साथ बढ़ता जाता है। इस उम्र का बालक प्रायः तटस्थ दृष्टा की तरह होता है जो अन्य बालकों को मात्र खेलते हुए देखता है, अन्य बालकों से बातें करता है, लेकिन समूह के खेल में प्रत्यक्ष रूप से शामिल नहीं होता। 4 वर्ष की आयु तक बालक में 'संगठित खेल' का आरंभिक रूप परिलक्षित होने लगता है। वह दूसरों के प्रति सचेत हो जाता है और आत्म प्रदर्शन द्वारा दूसरों का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश करता है।

सामाजिक व्यवहार

पूर्व बाल्यावस्था में बालकों में विभिन्न सामाजिक व्यवहार जैस नेतृत्व शैली, पठन-पाठन, मनोरंजन (सिनेमा, रेडियो तथा टेलीविजन) इत्यादि प्रविधियों के माध्यम से प्रदर्शित होते हैं। सामाजिक व्यवहारों के विकास का क्रम उत्तर बाल्यावस्था में भी जारी रहता है। इस अवस्था में बालक प्रायः समूहों का निर्माण करते हैं तथा समूह में अपनी अन्तः क्रिया करते हैं जिससे उनकी विकास गति अबाध रूप से चलती रहती है। इस अवस्था को 'टोली अवस्था' भी कहते हैं। इस अवस्था में बालक सभी सामाजिक व असामाजिक व्यवहार जैसे- खेल, आपसी सहयोग प्रदर्शित करना, लोगों को तंग करना, तम्बाकू खाना, भद्दे या गंदे वार्तालाप करना इत्यादि।

समूह से ही सीखते हैं। बच्चे टोली के अन्य बच्चों के सुझावों तथा व्यवहारों के प्रति अत्यधिक ग्रहणशील होते हैं तथा टोली के व्यवहार के अनुसार अपने अहं का विकास करते हैं। ये बालक मित्रों के व्यवहारों से अत्यधिक प्रभावित रहते हैं तथा अपने सामाजिक स्वीकृति को मित्र की स्वीकृति से जोड़ कर देखते हैं। इसी अवस्था में नेतृत्व के गुण का विकास होता है। टोली में जो बालक अत्यधिक प्रभुत्व प्रदर्शित करता है उसे सभी अपने टीम का नेता स्वतः चुन लेते हैं तथा वह समूह का नायक बन जाता है। वह समूह के अन्य सदस्यों से अधिक लोकप्रिय होता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि बाल्यावस्था के आरम्भ में, बच्चे समानांतर खेल का संरूप प्रदर्शित करते हैं अर्थात् दो बच्चे साथ रहकर भी स्वतंत्र रूप से (स्वान्तःसुखाय) खेल खेलते हैं। 'स्वतंत्र खेल' के पश्चात्' सहचारी खेल' का संरूप दिखता है तथा बालक में आधारभूत सामाजिक अभिवृत्ति याँ विकसित होती हैं। इस अवस्था के प्रमुख सामाजिक व्यवहार है- अनुकरण, प्रतिस्पर्धा, नकारवृत्ति, आक्रामकता, कलह, सहयोग, प्रभावित, स्वार्थपरता, सहानुभूति तथा सामाजिक अनुमोदन इत्यादि। बालक में प्रसामाजिक तथा समाज विरोधी दोनों प्रकार के व्यवहार परिलक्षित होते हैं। धनात्मक सामाजिक अभिवृतियाँ समाजोपयोगी व्यवहारों जैसे- अनुकरण, प्रतिस्पर्धा, सहयोग, प्रभाविता तथा सामाजिक अनुमोदन आदि के विकास में सहयोगी होती हैं जबकि ऋणात्मक सामाजिक अभिवृत्तियाँ समाज विरोधी व्यवहारों जैसे- नकारवृत्ति, आक्रामकता, कलह, स्वार्थपरता आदि को बालकों में उत्पन्न करती है। बालक में सामाजिक व्यवहारों के विकास में परिवार की भूमिका के अतिरिक्त उनकी मित्र मण्डली तथा उनके साथ अन्तःक्रिया का महत्वपूर्ण योगदान होता है। खेल तथा नाटकीय (जीववाद) के माध्यम से बालक सामाजिक व्यवहार सीखता है। खेल में उपयोग होने वाले निर्जीव खिलौने को सजीव मानकर व्यवहार प्रदर्शित करते हैं तथा नाटकीकरण के दौरान वास्तविक जीवन की घटनाओं की नकल कर सामाजिक व्यवहार प्रदर्शित करते हैं।

संदर्भ-सूची

1. शर्मा, आर. के. (2016). विविधता, समावेशी शिक्षा और जेन्डर, राधा प्रकाशन मंदिर आगरा
2. ठाकुर, यतीन्द्र (2016). समावेशी शिक्षा, राखी प्रकाशन प्रा.लि. आगरा
3. सिंह आर. एन. (2010-2011) आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
4. आलम के.जी. (1998) आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान मोती लाल बनारसी दास बंगलो रोड जवाहर नगर दिल्ली 1100071
5. इन्दुभूषण (2008) प्रारंभिक मनोविज्ञान (भाग - 1) भारती भवन, पब्लिशर्स एण्ड डिस्टीब्युटर्स ठाकुरवाड़ी रोड, कदमकुआं पटना
6. शर्मा, अंजलि (2001). समावेशी शिक्षा और विद्यालय, राधा प्रकाशन मंदिर आगरा
7. नाटी, अंजुम, शर्मा शिल्पी एवं सक्सेना, भारती (2014). समावेशी शिक्षा एस.डी.आर. प्रिंटर्स नई दिल्ली।
8. आर्या, सतपाल (2016). समावेशी शिक्षा, एस.आर. पब्लिकेशन, नई दिल्ली